ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

श्रीमद् भगवद्गीता और योगतत्व समन्वयमीमांसा

डॉ. राजेश्वरी एम पटेल

धर्मेन्द्रसिंहजी आर्ट्स कोलेज, राजकोट .

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
An International Multidisciplinary Research e-Journal

श्रीमद् भगवद्गीता और योगतत्व समन्वयमीमांसा

भूमिका

प्रस्तुत शोध पत्रमे श्रीमद् भगवद्गीता और योगतत्व समन्वयमीमांसा का विवेचन या गया इसमें कल्याण की इच्छासे प्रेरित होकर कल्याण के रास्ते और साधन की खोज में निकले हुए प्रत्येक विचारशील मनुष्यका अनुभव है की यधपि भगवान की रची हुई सृष्टि के अंतर्गत अनन्तकोटि ब्रह्माण्डो में रहनेवाले अनन्तकोटि जीवोमे शरीर इन्द्रिय, चितवृतियो, बुध्धि, विधा, अभ्यास आदि अंशो में अनन्त भेदो के होने के कारण कल्याण या शाश्वत श्रेय के साधन के विचार में अनन्तकोटि मत भेद हुआ करते है। और एक-एक जीव के मन में भी एक ही दिन में असंख्य मत परिवर्तन हो जाया करते है, तो भी सब जीवोके विचार में इस बात में अत्यंत एकता हमेशा नजर आती है कि उनका अन्तिम लक्ष्य तो एक ही हुआ करता है वह यह है कि हम सब स्थानो में सब समयो में, सब अवस्थाओ में और सब प्रकार से सुख-शान्ति मिलती रहे और हमारी उन्नति ही होती रहे, किसी स्थानो में किसी अवस्था में, किसी बात में किसी प्रकार का तानिक भी दु:ख अशान्ति या अब निति न होने पावे, इसी स्वाभाविक एवं अनिवार्य चितवृति तथा इच्छा से प्रेरित होकर सब जीव अपने अपने विचार तथा शक्ति के अनुसार अनेक प्रकार के प्रयत्न करते रहते है। जीवन का चिन्ह, उन्नति का सचा अर्थ, लक्ष्य और साधन का क्रम मतान्तरो का लक्ष्य, लक्ष्य प्राप्ति का साधन, साधना का नाम योग है। योग के अनेक प्रकार की विवेचना इसमें कि गई है।

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

लक्ष्य और साधन का क्रम

लोकिक कार्योमे भी तो यही क्रम होता है की पहले अपने प्रास्व्य स्थान (Goal या Destination) का संकल्प या निश्रय कर लेते है और तस्पश्रात रास्ते के बारे में जिज्ञासा करने लगते है। यदि अनेक रास्ते हो तो उनमे से कोन सा रास्ता सच से नजदीक है, कोन सा सबसे शीध्र पहुचानेवाला है, कोन सा सबसे सस्ता हे और किस में सब से अधिक आराम हे इस बात का निश्रय करते है। किन्तु बड़े खेद की बात है कि इन छोटी-छोटी यात्राओ में भी इसी क्रम से चालाकी पर अत्यन्त प्रसन्न होते हुए भी अपने जीवन रूपी इस प्राम्भिक सचिदानंद स्वरूपी परमात्मा के इन्ही पांच लक्षणो का अपने में चाहता है। अर्थात हम सब नर होते हुए भी, नारायण के लक्षण या अस्तित्व को, भी न जानते हुए यथार्थ में नारायण ही बनना चाहते है और इसी इच्छा को पूर्ण करने के लिये अपने अपने विचार के अनुसार अनेक प्रकार के प्रयत्न करते रहते है।

लक्ष्यप्राप्ति का साधन

यदि हम नरो के अपने अपने दिल की गवाहो से सिध्ध हुए इस नारायण रूपी लक्ष्य प्राप्त करना हो तो हमे उन विधमो से जो हमारे हृदय के इस लक्ष्य का विचार तक नहीं करते, उसके साधन का ज्ञान केसे मिल सकता है। इसलिये हम अपने सनातन धर्म से ही जिसमे हमारे लक्ष्य का पता लगाकर उसकी प्राप्ति के उपाय भी बतलाया गये है, इसका साधन सिखाना होगा।

अनेक प्रकार के योग

इस साधनरुपी योग का जब विचार किया जाता है तब इस बात का अनुभव होत है कि शारीरिक, मानसिक बौद्धिक, आध्यात्मिक आदि सब द्रष्टिकोण से विवेचन करने पर साधको की अभिरुचि और सामर्थ्य में जो अनन्त भेद होते है, उनके कारण स्वाभाविक और अनिवार्य अधिकारी भेद के अनुसार साधन में भी अनेक प्रकार के भेदो का होना और अनिवार्य है। इसलिए नर की नारयण के साथ एकता

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

करनेवाला साधन सब के लिए एक नहीं हो सकत: बल्कि अपने अपने अधिकारी के अनुसार प्रत्येक साधक को अपने साधन का निश्रय करके उसे कम लेना होगा, अत एव परमं कल्याण के साधन रूपी योग अनेक प्रकार के होते है और हमारे शास्त्रो में उन सबका नाम योग ही पाया जाता है।

उपहासकी बात

यात्रा तो शुरू हो चुकी है और हम अपने लक्ष्य की दिशा को भी न जानते हुए यात्रामे बहुत दूर निकल जाने के बाद भी, लक्ष्य का विचार न करके रस्ते में मिलनेवाले प्रत्येक व्यक्ति से पूछते रहते है की हमें किस मार्ग से चलना चाहिये, अथवा केवल चर्चा मात्र करते रहते है की अमुक मार्ग ही अच्छा है, अमुक नहीं, इत्यादि इस से बढकर अथवा इसको समान भी उपहास की बात और क्या हो सकती है स्वयं हम ही न जाने की हमे कहा जाना हे, नहीं, हम और के साथ चर्चा भी करते रहे की कोन सा रास्ता अच्छा है, इत्यादि?

इसका परिणाम

जब स्वयं हम नहीं जानते की हमें कहा जाना है और इसलिये अपने लक्ष्यका निर्देश न करते हुए हर एक व्यक्ति- से अपने मार्ग या साधनके बारेमे प्रश्न करते या सलाह मांगते चलते है, तब इसका यही परिणाम स्वाभाविक, उचित एंम अनिवार्य भी है की जिससे सलाह मांगी जाती है वह हमारे भीतर के लक्ष्यको न जानते हुए, और कदाचित अपने अन्दर के लक्ष्य का भी विचार न करते हुए उसी क्षण उसके मन में जो मार्ग अच्छा या हितकर लगेगा उसीको बता सकेगा और बताने को विवश होगा। अत: हमें सबसे पहले अपने असली और सच्चे लक्ष्य का पता लगाना होगा। लक्ष्य का निश्रय हो जानेके बाद साधन का विचार अपने आप उपस्थित होगा। इसलिये इस लेखके आरम्भ में इसी बात का उपोद्घात रूप से विचार किया जाता है की मनुष्य जाति का असली लक्ष्य क्या हे?

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

असली लक्ष्य एक हे

यह विचार आरम्भ करने से पहले यह आक्षेउ हो सकता है कि एक-एक मनुष्यके मन में भी एक ही दिन में और एक-एक क्षण में बहुत- सी इच्छाए उत्पन्न होती रहती है और उनमे वारंवार परिवर्तन भी हुआ करते है, अत: एक ही व्यक्ति के हृदय का भी एक ही निश्रत और नियत लक्ष्य नहीं होता। ऐसी हालत में हजारो प्रकार के और अत्यन्त विभिन्न विचारो के मनुष्यो का एक ही लक्ष्य कैसे हो सकता है? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि जब एक-एक मनुष्यके विचारो और इच्छाओमे भी विपुल भेद हो जाया करते है तब अनन्तकोटि मनुष्यो के विचारो में अनन्त भेदो का होना अवश्यभावी है। ऐसी दशा में सब के मन में एक ही इच्छा या लक्ष्य का होना असम्भव सा ज्ञात होता है।

साधनके विचारोमे भेद

यह बिलकुक सत्य है कि एक आदमी पैसेके पीछे हुआ नजर आता है, दूसरा शरीर की तंदुरस्ती एवं बल की खोज में है, तीसरा विधा की चिन्ता मेंरहता है, चौथा कीर्ति-का भूखा है, इत्यादि , इत्यादि। किन्तु ऊपर ऊपर न जाकर थोडा ही गहरा विचार करने पर हम सबको स्पष्ट हो जाता है की कोई भी इन चिजो के लिये इन चीजों को नहीं चाहता, बल्कि उपयुक्त एक-एक वस्तुको सच्चे सिद्धांत के अनुसार या भ्रम से -अपने हृदय के अभीष्ट अखण्ड, परिपूर्ण और शाश्वत शान्ति और आनन्दरूपी असली एवं सच्चे लक्ष्य का साधन समझकर और मानकर, उसकी प्राप्ति के लिये प्रयत्न करता है। उदाहरणार्थ, रात-दिन पैसे का ही चिन्तन और ध्यान करनेवाले किसी व्यक्ति से पूछा जाय कितु पैसे क्यों चाहता है, तो वह जवाब देगा कि पैसे से मै अमुक अमुक भागो का उपभोग कर सकता हु। इसपर उससे पूछा जाय कि तू अमुक-अमुक भागो का क्यों भोगना चाहता है, तो वह यही उत्तर देगा कि मुझे अमुक-अमुक भोगो से आनन्द होता है। अगर फिर उससे पूछा जाय कि तू आनन्द को क्यों चाहता है तो इस प्रश्नके उत्तर में यही जवाब हमेंशा मिलता है कि आनन्द चाहना स्वाभाविक है। कोई या नहीं कहता कि में अमुक तंदुरस्ती, बल, विधा, कीर्ति आदि अन्य

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

सब पदार्थो के बारे में भी इसी प्रकार के प्रश्नातर होते है।

लक्ष्यकी एकता और लक्षण

तात्पर्य यह है कि सबका एकमात्र लक्ष्य है और धन-धान्य, गृह, पुत्र ,विधा, आरोग्य, कीर्ति आदि सब पदार्थो को आनन्दरूपी अपने हृदय के असली, सच्चे और अंतिम लक्ष्य का साधन समझकर-हम लोग उन सब चीजों के पीछे पड़ा करते है। अथार्त विचार में जितने भेद होते है वे सब -के-सब साधन के बारे में है, लक्ष्य के विषय में भी तो तिलमात्र या अणुमात्र भी भेद नहीं होता और न हो सकता है। जब आगे हमें इस बात का विचार करना है की हम सब के हृदयके भीतर हमेंशा रहने वाले इस शाश्वत और अखण्ड आनन्दरूपी लक्ष्य के अंतर्गत क्या-क्या लक्षण होते है, उन्हें जानने के लिये शास्त्रीय ग्रंथो के प्रमाण अथवा अन्य किसी मनुष्य विशेष की साक्षी लेने की आवश्यकता नहीं है। अपने ही दिलसे पूछ-पूछकर की है दिल ! तू क्या-क्या चाहता है, हम पता लगा सकते है की हमारे हार्दिक लक्ष्य के कितने लक्षण होते है और वे क्या-क्या है।

पहला लक्षण सत्स्वरूप

VIDHYAYANA

प्रत्येक जिज्ञासु को अपने दिल से ही पूछने पर कि है हृदय ! तू क्या चाहता है, पता लग सकता है कि में सदा जीवित रहू। जो अत्यन्त वृद्ध और बिलकुल कमजोर हो गया है, जिसके नेत्र, श्रोत्र, बुद्धि आदि से कुछ भी कम नहीं होता, जिसकी जठराग्न्नी में अत्यन्त हल के खाध और पेय पदार्थो को भी हजम करने की शक्ति नहीं रह गयी है और जो नाम-मात्र को जिन्दा रहते हुए भी यथार्थ में मरा हुआ ही समझा जाना चाहिये, ऐसा मनुष्य भी मरना नहीं चाहता, बल्कि सर्वदा जीते ही रहना चाहता है। ऐसे आदमी से यदि पूछा जाय कि तू जिन्दा रहकर क्या करेगा और क्या कर सकता है, अथवा तू जिन्दा रहना क्यों चाहता है इत्यादि, तो कदाचित् उससे यही उत्तर मिलेगा की जिन्दा रहने की इच्छा स्वाभाविक है, उसमें कारण की अपेक्षा नहीं होती। अथार्त जिन्दा रहना ही स्वत: एक लक्ष्य है, किसी इतर लक्ष्यका साधन नहीं

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

है। इस प्रकार के विचार से स्पष्ट है कि सदा जीवित रहना हम सबका प्रथम लक्ष्य है। और इसीका हमारे शास्त्रों में सत्पदार्थ नाम है।

दूसरा लक्षण - चित्पदार्थ

इसी प्रकार अपने-अपने दिलसे पूछने पर सब को पता लग सकता है कि हम सब जिन्दा रहते हुए सब पदार्थो को जानना चाहते है। अर्थात ज्ञान है हम सब का दूसरा लक्ष्य और इसी का नाम है हमारे वेदान्त की परिभाषा में चित।

तीसरा लक्षण - आनन्द पदार्थ

पुन: इसी तरह, विचार करने से स्पष्ट होता है की केवल जिन्दा रहने और सब बातो को जानने से ही तृप्त होकर हम दू:ख लेश से भी रहित, केवल एवं अखण्ड और परीपूर्ण सुख को भी चाहते है। अथार्त दू:ख लेश से भी रहित केवल शुद्ध, अखण्ड, परीपूर्ण सुख है हमारा तीसरा लक्ष्य और इसी का नाम हमारी संस्कृत भाषा में आनन्द है।

चौथा लक्षण - मुक्तस्वरुप

परन्तु, यदि अपने हृदय की अभीष्ट सब सुख सामग्री हमें अपने स्वतंत्र अधिकार से न मिलकर दुसरे किसी के अनु ग्रह से मिला कर तो ऐसे सुख से हमें तृप्ति और संतोष नहीं होत और हम कहने लगते हे की 'पराधीनता में रहकर इन सब सुखो का भोगने की अपेक्षा स्वतन्त्रता में रहते हुए कम सुखो का भोग करना श्रेष्ठ है, पराधीनता परम दु:ख है, इत्यादि।

इस आदर्श रूप परम ध्येय को अपने दिल से कोई भी विचारशील मनुष्य निकाल नहीं सकता, क्योकि यह इच्छा तो प्राणीमात्र के हृदय में इश्वर द्वारा ही स्थापित है। निम्नलिखित लौकिक दृष्टान्तो से भी यह बात सिद्ध होती है। तोते-चूहे आदि छोटे-छोटे जानवर भी किसी बड़े सुखमय स्थानो में खाने-पिने

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

आदि की द्रष्टि से भी खूब आनन्द में रहते हुए भी, मौका मिलने पर तुरंत अपने हिन-दीन जंगली स्थान की और चल पड़ते है। इसका कारण यही है कि जिव मात्र के हदय में प्राकृतिक नियमो के अनुसार यही भाव रहता हे की परतंत्रता में रहकर सुख भोग ने की अपेक्षा दुःख भोगते हुए भी स्वतंत्रता में रहना श्रेष्ठ है। जब कृमि, कीट आदि के मन में भी यही इच्छा होती है तब मनुष्यो में उत्पन्न हुए उस्कृष्ट कोटि के जीवो के लिये यह बात कैसे हो सकती है की ये सर्वबन्ध-निवृतिरूपी मोक्ष साम्राज्य को न चाहते हुए पराधीनता को पसंद करते रहे? इन सब विचारो से स्पष्ट है की स्वतंत्रता है हम सब का चौथा लक्ष्य और इसी का नाम है हमारे वेदान्त की परिभाषा में मोक्ष।

पांचवाँ लक्ष्य- ईशस्वरुप

अगला प्रश्न यह है की क्या शाश्वत अस्तित्व, अखण्ड ज्ञान, परीपूर्ण आनन्द और स्वतंत्रता के मिल जाने पर हम तृप्त हो जाते हे? नहीं, क्योंकि फिर एक पांचवी वस्तु की भी हमारे मन में स्वाभाविक इच्छा हुआ करती है। वह यह है की हमें किसी दुसरे की इच्छा के अनुसार न चलना पडे, केवल इतने से ही हम संतोष नहीं कर लेते, अपितु यह चाहते है की सारे जगत के समस्त जीव हमारी इच्छा के अनुसार चले। जिन्हें दुनिया का लेशमात्र भी अनुभव नहीं है, ऐसे छोटे-छोटे बालक भी तो यही चाहते है कि उनकी इच्छा के अनुसार उनके अनुभवी माता-पिता आदि भी चले। अर्थात हम और के उपर शासन करना भी अवश्य चाहते है। हमारे हदय के इसी पांचवे लक्ष्य का संस्कृत नाम ईशन या ईश्वरस्वरुप है।

इन पांच लक्षणोसे लक्षित लक्ष्यका नाम

अब इस बातका विचार करना है की इन पांच लक्षणो से लक्षित लक्ष्य का नाम क्या हे, उसका स्थान कहा हे, इत्यादि। सब धर्मो के शास्त्र ग्रंथो ने बताया है की ये पांच लक्षण परमेश्वर में पाये जाते है, और कही नहीं। अर्थात इन पांच लक्षणो से लक्षित लक्ष्य का नाम है भगवान् ,और उसका स्थान भी वही है। जो मनुष्य अपने को नास्तिक कहता हुआ बड़े गर्व के साथ चाहता है की में ईश्वर को नहीं मानता इत्यादि,

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

वह भी तो नित्य-शुद्ध -बुद्ध-मुक्त है।

इसका हठयोग, कुलकुण्डलिनीयोग, अकुलकुण्डलिनीयोग, वागयोग, शब्दयोग, अस्पर्शयोग , साहसयोग, शून्ययोग, श्रद्धायोग, भक्तियोग, प्रेमयोग, प्रपति (शरणागति) योग निष्काम कर्मयोग, राजयोग, राजाधिराजयोग, ध्यानयोग. सांख्ययोग, ज्ञानयोग, अभ्यासयोग, महायोग, पूर्णयोग आदि अनेकानेक योगोका पतंजलि आदि के ग्रंथो में विस्तृत वर्णन मिलता है।

श्रीमद्भगवद्गीतामें योगोकी संख्या

इनके अतिरिक्त श्रीमद्भगवद्गीता के मूल वक्यो में ही बहुत-से और अनेक प्रकार के योगो का उल्लेख आता हे, जिन में से कुछ नाम ये हे -? समत्वयोग (२/४८, ६ /२९-३३) २ ज्ञानयोग (३) ३,१३,/२४,१६ !?) ३ कर्मयोग (३/ ३, ५ /२, १३/२४) ४ देवयज्ञयोग (४/२५) ५ आत्मासंयमयोग (४ /२७) ६ योगयज्ञ (४ /२८) ७ ब्रह्मयोग (५ /२९) ८ संन्यासयोग (६ /२, ९/२८) ९ दुखःसंयोगवियोगयोग (६/२३) १० अभ्यासयोग (८ /८,१२ /९) ११ ऐश्वरयोग (१/५,११ /४-९) १२ नित्यामियोग (९ /२२) १३ सततयोग (१० / ९, १२ /१/) १४ बुद्धियोग (१० / १०, १८ /५७) १५ आत्मयोग (१०/१८, ११/५७) १६ भक्तियोग (१४ /२६) १७ ध्यानयोग (१८/ ५२)।

अनासक्तियोग और असहयोग

इस खास मौके पर कोई पूछे कि अनासक्तियोग और अहयोग (जो आजकल हिंदुस्तानमें पुस्तक रूप से एवं प्रचार के द्वारा प्रसिद्ध हुए हे) क्या चीजे है, तो उतर में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि - श्रीमद्भगवद्गीता में जो कर्मयोग अथवा निष्काम कर्मयोग जगप्रसिद्ध है उसीका अनासक्तियोग यह नया नाम रखा गया है। अनासक्तियोग कोई नयी वस्तु नहीं है।

(१) असहयोग तो कोई योग ही नहीं है। पांतजलादि योगशास्त्र के ग्रंथो में योगसाधना के बीच में यह बताया गया हे की सजनो के साथ मैत्री और दुष्टों के प्रति केवल उपेक्षा का भाव रखना चाहिये। और

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA
An International Multidisciplinary Research e-Journal

श्रीमद् भगवद्गीता में भी 'अनपेश्र", 'उदासीन" आदि शब्दों के द्वारा उपेक्षा का ही वर्णन मिलता है। योग साधनान्तगंत साधना में से इसी उपेक्षा रूपी एक छोटे टुकड़े का ही आजकल असहयोग नाम रखा गया है। यह भी कोई नयी चीज नहीं है और पूरा योग भी नहीं है।

परस्पर सम्बन्ध

पूर्वो के सब प्रकार के योगे के जो वर्णन भिन्न-भिन्न ग्रंथो में मिलते है उनके आधार पर इन सब योगे के परस्पर सम्बन्ध, आनुपूर्वी आदि का विवेचन करना इसलिये बहुत कठिन है की वे परस्पर विरुद्ध प्रतीत होते है, किन्तु उनके समन्वय की अत्यंत आवश्यकता सभी जिज्ञासुओ के अनुभव से सिद्ध है।

योगका निर्वचन

इसके अतितिक्त जिज्ञासुओ के लिये यह भी एक कठिनाई का कारण हो जाता है कि योग के निर्वचन के बारे में गडबड नजर आती है। क्योंकि भगवान् पतंजलि ने अपने योग सूत्रों में योग का -

'चितवृतिनिरोध:'

यह एक सरल निर्वचन दिया है, किन्तु दुसरो ने और-और प्रकार के निर्वचन दिये है। श्रीमद् भगवद्गीता रूपी एक ही ग्रंथ में इसके अनेकानेक निर्वचन दिये गये है। इन सब निर्वचन के भी समन्वय की आवश्यकता है।

ISSN 2454-8596
www.vidhyayanaejournal.org
VIDHYAYANA An International Multidisciplinary Research e-Journal

संदर्भ ग्रंथ सूचि

१. समत्वं योग उच्यते / (२/४८)

२. योग: कर्मसु कौशलम्/ (२/५०)

३. योग्सन्यस्तकमॉणम् (४ /४१)

४. योगयुत्को विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रिय//(५/७)

५. Radhakrishnan S., 'Bhagavad Gita' published by Rajpal & sons, Delhi, 1962

६. Bhakti Vedanta A.C. & Swami Prabhu Pad, 'Bhagavadsandseh' Published by Bhakti Vedanta Granth Sansthan, Kandhivali Bombay vol.1, 1986

७. Bhakti Vedanta A.C. & Swami Prabhu Pad, 'Bhagavadsandseh' Published by Bhakti Vedanta Granth Sansthan, Kandhivali Bombay vol. 2, 1986

८. Tattavabhuhan, S. 'The Bhagavad Gita', Cosmo Publication, New Delhi, 1987

९. Shivanand, 'Gita Rasamrita' sarvasewa sangh Prakashan Rajght, Varanasi, 1997